तेल की बदलती धार और हम

सौरभ चंद्र, पूर्व पेट्रोलियम सचिव, भारत सरकार

Last updated: Fri, 17 Jan 2020 12:16 AM IST

कच्चे तेल के अंतरराष्ट्रीय व्यापार की कई बुनियादी विशेषताएं हैं। मसलन, यह वैश्विक राजनीति से सर्वाधिक प्रभावित होने वाली वस्तु है। गुणवत्ता के कारण कच्चे तेल के मूल्य में मामूली क्षेत्रीय अंतर बेशक दिखते हों, लेकिन इसका वैश्विक मूल्य है। कोई भी देश इसकी कीमत के उतार-चढ़ाव से अछूता नहीं रह सकता। मूल्यों की यही अनिश्चितता कच्चे तेल का अटल सत्य है। कच्चा तेल और पेट्रोलियम पदार्थ विश्व की सर्वाधिक आयातित-निर्यातित वस्तु हैं। चंद अपवादों को छोड़ दें, तो इनका अंतरराष्ट्रीय व्यापार डॉलर में होता है। डॉलर के अंतरराष्ट्रीय रिजर्व मुद्रा बनने की मूल वजह यही है कि अमेरिका किसी भी अन्य मुद्रा में व्यापार के प्रयास को सहन नहीं करता।

कीमत की जिस अनिश्चितता को इसकी बुनियादी विशेषता बताई जाती है, अंतरराष्ट्रीय बाजार इन दिनों इसी से जूझ रहा है। खासतौर से गत 3 जनवरी के बाद से, जब अमेरिका ने ईरान के सैन्य कमांडर कासिम सुलेमानी की हत्या इराक में कर दी। इस घटना से खाड़ी में युद्ध के बादल मंडराने लगे थे। 1990-91 के खाड़ी युद्ध और 2003 के इराक युद्ध के बाद पैदा हुई स्थिति की पुनरावृत्ति की आशंका बढ़ चली थी। तेल के मूल्यों में भारी उछाल आ गया था। हालांकि तमाम आशंकाओं के विपरीत स्थिति जल्द ही काबू में आ गई, और तेल के दाम पुराने स्तर पर लौट आए। वैसे भी, अमेरिका में घरेलू तेल के दामों पर अंकुश लगाना राष्ट्रपति ट्रंप की मजबूरी है, क्योंकि इसी साल के अंत में उन्हें अगले कार्यकाल के लिए चुनाव में उतरना है।

रही बात भारत की, तो हम जितना तेल का उत्पादन करते हैं, उससे हमारी महज 17 प्रतिशत जरूरतें ही पूरी हो सकती हैं। बाकी तेल हमें दूसरे देशों से खरीदना पड़ता है। दुखद है, आयातित तेल का प्रतिशत गत वर्षों से निरंतर बढ़ रहा है। इसकी मुख्य वजह घरेलू उत्पादन में कमी और बढ़ती हुई मांग है। देश में सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की बढ़ोतरी के लिए ऊर्जा की आवश्यकता किसी से छिपी नहीं है। पेट्रोलियम पदार्थ 'एनर्जी बास्केट' (ऊर्जा की कुल जरूरत) का महत्वपूर्ण घटक हैं। लिहाजा तेल का निरंतर बढ़ता हुआ आयात सामरिक चिंता का विषय है। इसका सीधा प्रभाव देश की ऊर्जा सुरक्षा पर पड़ता है। खासकर, जब आयातित तेल का बड़ा हिस्सा दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों से मंगवाया जाता है।

यह क्षेत्र दरअसल तेल की अत्यधिक उपलब्धता के कारण करीब सौ वर्षों से महाशक्तियों का क्रीड़ास्थल रहा है। यह वही इलाका है, जहां पिछले साल सितंबर में सऊदी अरब के दो तेल ठिकानों पर ड्रोन से हमला हुआ था, जिसका आरोप ईरान पर लगाया गया था, पर यह साबित नहीं हो सका। हालांकि इस हमले के बाद कुछ अवधि के लिए सऊदी अरब की 57 लाख बैरल प्रतिदिन की उत्पादन-क्षमता प्रभावित हुई थी। वैसे, इसी क्षेत्र में ईरान भी है, जिसका निर्यात अमेरिका द्वारा लगाए गए आर्थिक प्रतिबंधों के कारण लगभग शून्य हो गया है, और उसकी आर्थिक सेहत काफी बिगड़ गई है।

भारत की अर्थव्यवस्था के लिए तेल के दाम काफी मायने रखते हैं। कच्चे तेल की कीमत में एक डॉलर प्रति बैरल की वृद्धि से आयात बिल में लगभग 6,300 करोड़ रुपये की बढ़त हो सकती है। आयात लागत में वृद्धि की पूर्ति यदि निर्यात द्वारा न हो, तो रुपये की कीमत गिर जाती है। विनिमय दर में डॉलर की तुलना में एक रुपये की बढ़ोतरी से कच्चे तेल का आयात-बिल 5,900 करोड़ रुपये बढ़ सकता है। व्यापार घाटे और चालू खाता में घाटा का सीधा असर जीडीपी पर पड़ता है। कच्चे तेल के दाम सरकार की राजकोषीय स्थिति और महंगाई को सीधे रूप से प्रभावित करते हैं।

ईरान और अमेरिका के आपसी तनाव में कमी के कारण कच्चे तेल के मूल्यों में बेशक कमी आई है, और भारत ने भी राहत की सांस ली है, लेकिन चुनौती अब भी कम नहीं हुई है। भू-राजनीति और भू-आर्थिकी के कारण विषम स्थिति का जो आकलन किया गया था, वह फिलहाल निर्मूल साबित हुआ है। इसीलिए अब कच्चे तेल की मांग और आपूर्ति में संतुलन पर गौर करने का समय आ गया है।

हमें यह समझना चाहिए कि कच्चे तेल की अंतरराष्ट्रीय स्पर्धा से बचने के लिए बनाए गए समूह दशकों से तेल की कीमत को प्रभावित करते रहे हैं। 1930 से टेक्सास रेलरोड कमीशन उत्पादकों का कोटा निर्धारित करके कच्चे तेल के दामों को नियंत्रित करने का प्रयास करता रहा। सन 1960 में स्थापित ओपेक को भी इसी तर्ज पर ढाला गया है। 14 देशों का यह समूह विश्व के कुल तेल उत्पादन में 40 फीसदी का योगदान देता है। इसके सदस्य देशों के पास 80 फीसदी से अधिक तेल भंडार हैं। इसी संगठन ने 2017 में रूस और नौ अन्य देशों के साथ मिलकर तेल उत्पादन में 12 लाख बैरल प्रतिदिन की कटौती का निर्णय लिया था, जो इस साल मार्च तक वैध है। अमेरिका के बढ़ते तेल-उत्पादन और मांग बढ़ने की दर में कमी को देखते हुए ओपेक ने दिसंबर, 2019 में उत्पादन में पांच लाख बैरल प्रतिदिन की अतिरिक्त कटौती का भी फैसला लिया है।

जाहिर है, तेल-उत्पादन में कटौती से कीमत चढ़ेगी। इन दिनों तेल के दाम में कुछ उछाल देखने को मिल भी रहा है। हालांकि इसका कारण अमेरिका और चीन में हुए व्यापार समझौते को भी बताया जा रहा है। इस समझौते पर हस्ताक्षर की पूर्व-संध्या पर अमेरिका के ट्रेजरी सेक्रेटरी ने बयान देकर यह आश्वस्त किया था कि तेल की टैरिफ में कोई बदलाव नहीं किया जाएगा। उनके अनुसार, टैरिफ को समझौते के दूसरे चरण के लागू होने तक ज्यों का त्यों रखा जाएगा। नए समझौते के मुताबिक, चीन द्वारा अमेरिका को निर्यात की जाने वाली दो-तिहाई लागत पर टैरिफ में कोई बदलाव नहीं किया जाएगा।

हालांकि चीन का निर्यात प्रभावित ही रहेगा, क्योंकि मांग बढ़ना ही चीन में तेल की खपत में वृद्धि का मुख्य आधार रहा है। तेल के अंतरराष्ट्रीय मूल्यों का सीमा में रहना भारत के नीति-नियंताओं के लिए संतोष की बात है। इसके कारण राजकोषीय घाटे, मुद्रास्फीति और चालू खाते घाटे को नियंत्रित करने में सहायता मिलेगी। जीडीपी की बढ़ोतरी की रफ्तार बढ़ाने के लिए भी जमीन तैयार करना आसान हो सकेगा। मगर सवाल यह है कि क्या यह लाभ उठाने के लिए हम तैयार हैं?

(ये लेखक के अपने विचार हैं)